ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-6* September-2020
Anthology : The Research

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में प्रकृति सम्बन्धी लोक विश्वास

Folk Beliefs about Nature in Post-Independence Hindi Poetry

Paper Submission: 05/9/2020, Date of Acceptance: 24/09/2021, Date of Publication: 25/09/2020

ऋषिपाल
सह प्राध्यापक एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
बाबू अनन्त राम जनता महाविद्यालय, कौल, कैथल, हरियाणा, भारत

सारांश

प्राचीनकाल से प्रकृति एवं मानव का आपस में गहरा सम्बन्ध रहा है। मानव जन्म लेने के बाद आँख खोलने पर सर्वप्रथम प्रकृति का साहचर्य ही प्राप्त करता है। आदि मानव ने भी इसी अनुभूति का अनुभव किया होगा। इसलिए ''प्रकृति को मानव की सहचरी कहा गया है जो उसके जीवन की बाह्य आवश्यकताओं की पूर्ति करती हुई अन्तरंग अनुभूतियों को भी अपने रूप–सौन्दर्य से प्रभावित और चमत्कृत करने की अद्‌भुत क्षमता रखती है।''[1]

Since ancient times, nature and humans have a deep bond between themselves. After taking birth, human first of all attains the companionship of nature. Adi humans may have also experienced this feeling at their best.

मुख्य शब्द : लोक साहित्य, लोक संस्कृति, रीति–रिवाज।
Folk Literature, Folk Culture, Customs.

प्रस्तावना

विकासवाद के सिद्धान्त तथा आस्तिकों के मतानुसार ''मनुष्य ने प्रकृति की गोद में जन्म लिया तथा उसके साहचर्य एवं सहयोग से क्रमशः अपनी चेतना को विकास की ओर उन्मुख किया। वृक्षों के खट्टे–मीठे फलों तथा नदियों के कल–कल करते निर्मल, शीतल जल द्वारा मनुष्य की स्वाभाविक वृत्तियों का भी समाधान किया।''[2] हम कह सकते हैं कि आदि काल से ही प्रकृति प्राणी मात्र की पोषक है और मानव प्रकृति का पोषक बालक है। अतीत से लेकर आज तक मानव ने प्रकृति के सुन्दर, व्यापक एवं स्वच्छन्द प्रांगण में पेदा होकर उसकी दी हुई एवं अपने आस–पास फैली हुई निधियों के कारण अपनी समस्त आवश्यकताओं, इच्छाओं को पूरा किया या यूँ कहें कि स्वयं के विकास का उसे माध्यम बनाया।

समय के साथ–साथ मानव ने प्रकृति का अनुकरण करते हुए उसके तत्त्वों में स्पन्दनशीलता का अनुभव किया व उसके व्यक्तित्व एवं भावों से स्पन्दन करना सीखा व आत्मसात किया। यथा–समय यथा–संभव उसके बाद मनुष्य ने प्रकृति के गुणों को आत्मसात करने की कोशिश की। प्रकृति के कारण ही मानव ने अपने व्यक्तित्व एवं जीवन की अनेक क्रियाकलापों, समस्याओं एवं विविध विचारों की अनुभूति ग्रहण की। मानव के मन में भी प्रकृति के अनेक रूपों जैसे मधुर, रौद्र, शान्त, सहज व शुष्क आदि रूपों को देखकर स्वयं उसके मन में भी स्वाभाविक रूप से आश्चर्य, जिज्ञासा, विस्मय आदि के अनेक विचार पैदा हुए। यह देखकर मानव प्रकृति के समक्ष कृतज्ञ हुआ। अतः ''मनुष्य का प्रकृति के साथ स्वाभाविक रूप से चिर साहचर्य भोक्ता–भोग्य, बीज–वृक्ष, सहचर–सहचरी, दृष्टा–दृश्य, मातृ–शिशु, शिक्षक–शिक्षार्थी, उद्दीपक–उद्दीप्य अनेक रूपों में सम्बन्ध स्थापित हो गया।''[3]

भारतीय समाज एवं लोक जीवन में फैली हुई धारणाएँ, परम्पराएँ, मान्यताएँ एवं रीति–रिवाज ही लोक विश्वास कहलाते हैं। आदिकाल से विश्वास समय–समय पर सहज रूप से लोक सभ्यता के साथ–साथ लोक जीवन में प्रवेश कर जाते हैं। लम्बे काल में बदलावों के कारण ये परम्पराएँ, मान्यताएँ, विश्वास एवं रीति–रिवाज आने वाली मनुष्य की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित हो जाते हैं। आदिकाल से ही भारतीय लोक जीवन में विविध प्रकार की मान्यताएँ, परम्पराएँ, अन्धविश्वास, विश्वास एवं धारणाएँ व्याप्त हैं। फिर

स्वाभविक है कि किसी भी काल में ये विश्वास, परम्पराएँ, सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन के महत्त्वपूर्ण एवं अभिन्न अंग बन जाते हैं। भारतीय लोक जीवन में प्रकृति का विशेष स्थान रहा है। अनेक अवसरों एवं स्थितियों में प्रकृति मानव को प्रभावित भी करती है और संदेश भी देती है। भारतीय लोक जीवन में प्रकृति को लेकर अनेक अन्धविश्वास, रूढ़ियाँ, लोकविश्वास, मान्यताएँ परिव्याप्त हैं। भारतीय लोकजीवन में पक्षियों को लेकर विशेष रूप से कौआ, मोर, गौरया आदि को लेकर बहुत लोक विश्वास जन जीवन में व्याप्त हैं। पशुओं को लेकर भी भारतीय समाज में अलग–अलग लोक विश्वास प्रचलित हैं। भारतीय समाज में विश्वास है कि मनुष्य जब घर से बाहर निकलता है तो उसके आगे बिल्ली या नेवला रास्ता काट जाये तो उसकी यात्रा या कार्य में विघ्न पड़ जाता है। लोक जीवन में यह भी विश्वास है कि सुबह के समय घर के मुंडेर पर कौआ बोलता है तो उस दिन घर में मेहमान का आना प्रायः निश्चित है या अपशगुन भी हो सकता है। इसका एक सुन्दर उदाहरण अज्ञेय जी द्वारा उनकी कविता में मिलता है – जैसे ही जागा, कहीं पर अभागा, अड़ड़ाता है कागा – कायं!कायं!कायं! कायं! कायं!कायं! क्या करे कहाँ जाय? मुंह से यही हाय! निकले है मेरे – धतेरे नाश जाय। सच, मुँह–अंधेरे, सबेरे–सबेरे।[4]

उपरोक्त पंक्तियों में 'कौआ' कवि के लिए मंत्रणा का साक्षात्कार करता है। या यूँ कहें कि इस साक्षात्कार की अनुभूति ही इस समय के रचनाकारों का रचना बोध थी, इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं। केवल पशु–पक्षी ही नहीं, बल्कि दूसरे प्राकृतिक संसाधन भी कविता के लिए आधार बने, जिन सभी के साथ लोक–विश्वासों की परम्परा जुड़ी हुई थी। मुर्गे का रात्रि के अन्तिम प्रहर में बोलना निशा–अवशान का सूचक है। जब लोक जीवन में घड़ी का आविष्कार नहीं हुआ था तब मुर्गे की आवाज सुनकर प्रातःकाल में समय का अनुमान लगाया जाता था। भारतीय समाज में घर के बाहर या मुंडेर पर उल्लू का बैठना या उसका बोलना बहुत अशुभ माना जाता है। ऐसा विश्वास भी लोक जीवन में बना हुआ है कि उल्लू जिस जगह बैठता है, वह जगह उजाड़ हो जाती है या जहाँ उल्लू बोलते हैं, वहां अनर्थ होना प्रायः निश्चित है। भारतीय समाज में 'उल्लू बोलना' हिन्दी में मुहावरे के रूप में भी प्रचलित है। उल्लू बनाने का मतलब समाज में मूर्ख बनाने से लेते हैं। किसी आदमी को उल्लू कहना उसकी मन्द बुद्धि को भी इंगित करता है। 'रास्ते के बीच' कविता में कवि लिखते हैं कि – मैंने जाना था हर आदमी से, जिसने मेरी ही तरह गुम होने के बाद, तलाशा है खुद को, कि कितना आसान है, उल्लू बनाना, हर बार उल्लू बनाने के बावजूद, नहीं हो सका वह, जो तुम हो, तुम्हारा शहर है।[5]

पशुओं को लेकर भी भारतीय लोक जीवन में अनेक विश्वास प्रचलित हैं। भेड़िया बहुत ही चालाक जानवर माना जाता है। वह किसी भी बच्चे, छोटे जानवर, पशु का शिकार पलक झपकते ही कर लेता है। साहित्य में भेड़िये को दूसरों का खून चूसने वाला या शोषक की संज्ञा से जाना जाता है। प्रस्तुत कविता में इसका सुन्दर उदाहरण मिलता है – सामाजिक भूखे भेड़ियों के भक्षण के लिए, बाकायदा भेंट करता जाएगा, और इन्हीं मुरियाए–मक्कार सामाजिक भेड़ियों को, बुद्धि की जगह उन चर्बी भरी भेड़ों की भीड़ जैसी, जाहिल जनता आगामी चुनाव में, अपनी जलहालत का प्रामाणिक वोट देकर, अपना नेता चुन लेगी।[6]

भारतीय लोक जीवन में 'कुत्ता' लोक देवता का वाहन माना जाता है। वैसे कुत्तों का भौंकना अशुभ माना जाता है। भारतीय लोक जीवन में रात को कुत्तों का रोना अपशगुन का प्रतीक माना जाता है। इसी प्रकर भारतीय लोकजीवन में नायक–नायिका के मिलन में पक्षी भी सहायक होते हैं, ऐसा भी विश्वास है। कवि राणा प्रताप की कविता में इसका उल्लेख मिलता है – आज से घिर आयी है तुम्हारी याद, और मुंडेर पर बैठा कबूतर, उड़ चला है तुम्हारे आंगन की ओर, उसके पंख उग आये हैं फिर से, जिसे चाह कर भी हम टूटने से नहीं बचा पाये थे, तुम्हारे और मेरे बीच, अब से उड़ा करेगा एक कपोत, आज यह एक अच्छी शुरूआत है।[7]

लोक विश्वास है कि घर की मुंडेर पर कौअे का बोलना घर के किसी सदस्य को याद करना है – अब रोज, मेरे घर की मुंडेर पर, इंतजार का कौआ बोलेगा, रोज, मर्यादा की बिल्ली, तुम्हारा रास्ता काटेगी।[8]

भारतीय लोक जीवन में नर–नारी शाम के समय स्नान, शौच आदि से निवृत्त होकर भगवान की पूजा करते हैं। वैसे भी भारतीय लोक जीवन में शाम के समय में भक्ति करना लाभदायक माना जाता है। वैसे संध्या दुःख व पाप की प्रतीक भी मानी जाती है। ऐसा विश्वास भी हमारे समाज में व्याप्त है। पुराने समय से ही शाम के समय दीपक प्रज्जवलित किया जाता है – हां आकर कोई निश्चय दिया जलायेगा, दिपता–झिपता लुब्धक सूने में कभी उभर आयेगा। नंगी काली डाली पर नीर, धुंधला उजला पंछी मंडरायेगा।[9]

भारतीय लोकजीवन में मान्यता है कि शाम के समय लक्ष्मी अपना श्रृंगार करती है। उसको प्रसन्न करने के लिए स्त्रियाँ घर में दीपक जलाती हैं – वलय की खनकार, दीप वालोरी सुहागिनी, जाग उठै गृह–द्वार बन्दनवार।[10] यथा – दिया बाती के समय माँ गाती, शाम में रोशनी करते हुए गाना, उसे हर बार अच्छा लगता।[11]

भारतीय लोकजीवन में ऐसा विश्वास है कि सन्ध्या के समय सूरज डूबते ही समस्त प्रकृति मानो अकेली पड़ जाती है। पक्षी अपने–अपने घोंसलों में चले जाते हैं। पशु, जानवर भी अपने–अपने स्थान पर पहुंच जाते हैं। चारों तरफ सुनसान वातावरण बन जाता है। 'लौटा दो पगडंडियाँ' कविता में कवि कुमार रवीन्द्र ने इसका बहुत ही सुन्दर शब्दों में वर्णन किया है – सांझ की नदी के किनारे खड़ा, वह अकेला पेड़, कैसा सुनसान हो गया है, जब उसकी टहनियों से झरता, सूरज का रक्त, दिशाओं के तट पर लग गया है। घायल सूरज को ले जाती, पश्चिम की नौका, उस पेड़ की लटकती साख के नीचे जैसे ही पहुंची, वैसे ही रास्तों पर बढ़ते पांव थम गये, और अंधेरा निर्वस्त्र हो गया।[12]

भारतीय समाज में ऐसा भी विश्वास है कि शाम के समय देवी देवता भी मानो अपने निवास स्थानों पर

विश्राम करते हैं। 'बोलो तुम ही' कविता में इसका सुन्दर चित्रण मिलता है – और वह सांझ अकेली, जब देहरी पर देवों का, भान हुआ करता है।[13]

'शाम' को लेकर भारतीय लोक जीवन में बहुत लोक–विश्वास जुड़े हुए हैं। ऐसा भी मानते हैं कि शाम का वक्त नायक–नायिका के मिलन का उपयुक्त समय होता है। सन्ध्या विश्राम, आराम को प्रकट करती है। बागों में तितलियां शाम के समय उड़ने लग जाती हैं। उनका आना बागों में ऐसा प्रतीत होता है मानो बसन्त ने प्रेम पत्र भेजे हों। कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना लिखते हैं – सांझ होते ही गहरा नीला धुआं छोटे से गांव के, सीमांत पर जम गया है। खेतों के बरहों में, चलता हुआ मटियाला पानी, थम गया है। आकाश नीली टोपी लगाये, क्षितिज का टीला चरवाहे सा ढलते सूरज की आग, तप रहा है। वन पथ पर गिर पड़ी है, वृक्षों की छायाएँ शहतीर–सी।[14]

भारतीय लोक जीवन में लोक विश्वासानुसार किसी विशेष अनुष्ठान या शुभ कर्मकाण्डों के बाद हवन यज्ञ आदि की शेष सामग्री को पानी में प्रवाहित कर दिया जाता है। इसके पीछे लोक विश्वास यह है कि यदि शेष सामग्री इधर–उधर रख दी जाती है तो उसको पांव आदि लगने से अपशगुन होता है या उसका किसी भी प्रकार से अनादर होता है। पानी में प्रवाहित करने से जीव–जन्तु शेष सामग्री को खा लेते हैं। वैसे भी पानी किसी भी वस्तु को पवित्र कर देता है। यही कारण है कि घर आदि में पूजा–पाठ, हवन, यज्ञ आदि में प्रयुक्त समस्त सामग्री को पानी में प्रवाहित कर दिया जाता है। अज्ञेय की कविता में दीप–प्रवाह सम्बन्धी लोक विश्वास उनकी कविता में मिलता है – गंगा–कूल सिराने की लघु दीप, मूक दूत से लाओ सिन्धु समीप।[15]

भारतीय समाज में सूर्य को देवता माना जाता है। लोक विश्वास है कि सूर्य की पूजा से मनुष्य की मनोकामनाएँ पूरी होती हैं। यही कारण है कि सुबह स्नान करने के बाद सूर्य को पानी दिया जाता है। कुछ लोग तो सूर्य देवता को भगवान भी मानते हैं। कवि केदार नाथ सिंह की कविता 'यहाँ से देखो' में लिखते हैं – किसी अलक्षित सूर्य को, देता हुआ अर्घ्य, शताब्दियों से इसी तरह, गंगा के जल में, अपनी एक टांग पर खड़ा है यह शहर, अपनी दूसरी टांग से बिल्कुल बेखबर।[16]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि निश्चित ही प्रकृति से लोक जीवन का बहुत ही घनिष्ट नाता रहा है। प्रकृति मानव को समय–समय पर न केवल प्रभावित करती है अपितु अनेक मूक संदेश भी देती है, जिनको हम आत्मसात करके जीवन जीने के लिए लोकविश्वास के रूप में मानते हैं। आदमी जन्म से मृत्यु तक समाज में रह कर अपना जीवन यापन करता है। अपने व्यक्तित्व एवं बुद्धि का विकास करता है। उसे अपने आस–पास के वातावरण में लिप्त होना पड़ता है। प्रकृति के प्रत्येक अवयव से उसका गहरा नाता हो जाता है क्योंकि दिन–रात वह प्रकृति की गोद में ही रहता है। हवा, पानी, धूप, छाया, पशु–पक्षी, जानवर, नदी, पहाड़, पेड–पौधे, आकाश व धरती प्रकृति के सभी संसाधनों से उसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध रहता है। स्वाभाविक है कि साहचर्य के रूप में प्रकृति का मानव के मन पर भी उसके विभिन्न रूपों के अनुरूप प्रभाव अंकित होगा। प्रकृति का जो रूप उसे अपनी स्थिति के अनुकूल या प्रतिकूल दिखाई देगा वैसा ही विश्वास उसके मन में बन जायेगा। इस प्रकार युगों से प्रकृति के पदार्थों को लेकर अनेक विश्वास लोक जीवन में व्याप्त हो गये हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ॰ रामेश्वर लाल खण्डेलवाल, कविता में प्रकृति चित्रण, पृ॰ 03*
2. *डॉ॰ किरण कुमारी गुप्ता, हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण, पृ॰ 03*
3. *डॉ॰ लालता प्रसाद सक्सेना, हिन्दी काव्य में मानव तथा प्रकृति, पृ॰ 42*
4. *अज्ञेय, हरी घास पर क्षण भर पृ॰ 39–40*
5. *दिविक रमेश, रास्ते के बीच, पृ॰ 24*
6. *डॉ॰ जीवन लाल जोशी, ओ छटे हुए रास्तों, पृ॰ 16*
7. *राणा प्रताप सिंह, हाशिए पर लगे निशान,, पृ॰ 03*
8. *पूरन मुद्गल, अश्व लौट आएगा, पृ॰ 44*
9. *अज्ञेय, आंगन के पार द्वार, पृ॰ 25*
10. *भारत भूषण अग्रवाल, तार सप्तक, पृ॰ 25*
11. *आलोक धन्वा, दुनिया रोज बनती है,, पृ॰ 25*
12. *कुमार रवीन्द्र, लौटा दो पगडंडियाँ, पृ॰ 30*
13. *सुनीता जैन, बोलो तुम ही, पृ॰ 19*
14. *सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कुआनों नदी, पृ॰ 58*
15. *अज्ञेय, चिन्ता, पृ॰ 110*
16. *केदार नाथ सिंह, यहाँ से देखो, पृ॰ 22*